अद्वैत चिंतन

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

मतभेद या मनोभेद द्वैत में होता है। अद्वैत में एकरूपता होती है। द्वैत में दो पदार्थ अलग होते हैं। अद्वैत में एक में ही सब समाया रहता है। भारतीय दर्शन की चिंतन धारा में अनेक वाद और मत मतान्तर हैं। अद्वैतवाद एक ऐसा सिद्धान्त है जो एक को ही महत्व देता है। एकं सत् विप्राः बहुधा वदन्ति–अर्थात् सत् एक है विद्वान लोग उसे भिन्न–भिन्न अर्थ में व्याख्यायित करते हैं। अद्वैत चिंतन के प्रतिस्थापक शंकराचार्य हैं। आचार्य शंकर ने अद्वैतवाद की प्रतिष्ठा की है। अद्वैत का अर्थ है जीव और ब्रह्म में आत्मा और ब्रह्म में कोई भेद नहीं है। जो भेद दिखलाई दे रहा है वह माया के कारण है। माया के कारण द्वैत होता है। माया या अज्ञान के नष्ट होने पर अद्वैत का ज्ञान होता है। आत्मा ब्रह्म से पृथक नहीं है किन्तु पृथक प्रतीत होती है। आत्मा में जो सत्य है वह ब्रह्म ही है। जीवन प्रति शरीर भिन्न है यह भिन्नता ही अज्ञान है। वेदान्त के अनुसार तीन सत्ताएं हैं– प्रातिभाषिक सत्य, व्यावहारिक सत्य और पारमार्थिक सत्य। प्रातिभाषिक सत्य वो सत्य है जो हमें प्रतीत होता है। किन्तु वास्तव में उसकी सत्ता नहीं रहती। जैसे रज्जु में सर्प की प्रतीति। रज्जु में सर्प विद्यमान नहीं रहता किन्तु अधंकार या अज्ञान के कारण सर्प प्रतीत होता है। किन्तु जब प्रकाश में देखा जाता है तो सर्प की सत्ता नहीं रहती केवल रज्जु ही शेष रहता है। व्यावहारिक सत्य को संवृत सत्य कहते हैं। संसार का अस्तित्व व्यावहारिक स्तर पर सत्य है। किन्तु यह जगत वास्तविक सत्य नहीं है। सत्य तो केवल एक ही है वह है पारमार्थिक सत्य। अज्ञान के कारण लोग संसार को सत्य मान बैठते हैं। ज्ञान होने पर यह जगत असत्य प्रतीत होता है। ब्रह्म से पृथक इसकी सत्ता नहीं है। ब्रह्म ही पारमार्थिक सत्य है। वह अद्वैत है। ब्रह्म की सत्ता का ज्ञान होने पर सभी प्रकार की सत्ताएं उसमें समाहित हो जाती है। इस सत्य को कभी ब्रह्म कभी आत्मा और कभी केवल सत् कहते हैं। अद्वैत वेदान्त में आत्मा का सूक्ष्म विश्लेषण किया गया है। शरीर, प्राण, मन बुद्धि और उनसे उत्पन्न होने वाले आनन्द सबकी समीक्षा कर हम यह कह सकते हैं कि सब

आत्मा के क्षण भंगुर परिवर्तनशील रूप है। जो कुछ दिखाई दे रहा है वह आवरण मात्र है। जिसके भीतर असली तत्त्व छिपा रहता है सबका मूल आधार आत्मतत्त्व है। आत्मा शुद्ध चैतन्य स्वरूप है। किसी विषय का जो ज्ञान होता है वह इसी चैतन्य का एक सीमित प्रकाश है। शुद्ध चैतन्य सर्वव्यापी है। सत्य अनन्त और ज्ञान स्वरूप होने के कारण आत्मा सर्वव्यापी है। आत्मा को सर्वभूतात्मा कहा जाता है। आत्मा और परमात्मा एक ही है।

आत्मज्ञान या आत्मविद्या को पराविद्या कहा जाता है। सभी विद्याएं अपरा विद्या हैं। आत्मज्ञान का साधन है–श्रवण, मनन और निदिध्यासन। जब तक तो ज्ञान के द्वारा संस्कारों का लोप हो जाता है तब आत्मा का साक्षात्कार होता है। यह अत्यन्त कठिन मार्ग है। जिनमें इतना ज्ञान और दृढ़ संकल्प है कि प्रेय का परित्याग कर केवल श्रेय का अनुकरण करें उन्हीं को इसमें सफलता मिल सकती हैं। उपनिषदों में आत्मा या ब्रह्म को सब सत्ताओं का मूल और चैतन्य का आधार माना गया है। आत्मा सभी सुखों का मूल स्रोत है। समस्त सांसारिक आनन्द उसी आन्नद के क्षुद्रकण हैं। समस्त सांसारिक विषय उसी सत्ता की सीमित अंश हैं। जो आत्मा का साक्षात्कार कर सकता है वह ब्रह्म के साथ तादात्म्य स्थापित कर मुक्ति प्राप्त कर सकता है। याज्ञवल्क्य ने अपनी पत्नी मैत्रेयी को समझाते हुए कहा है कि आत्मा सभी आनन्दों का मूल स्रोत हैं। आत्मा से बढ़कर किसी को और कुछ प्रिय नहीं होता। मनुष्य किसी व्यक्ति या वस्तु को आत्मीय या आत्मवत मानकर प्रेम करता है। कोई वस्तु स्वतः प्रिय नहीं होती। पत्नी इसलिए प्रिय नहीं होती कि वह पत्नी है। पति इसलिए प्यारा नहीं होता कि वह पति है, पुत्र इसलिए प्रिय नहीं है कि वह पुत्र है, धन भी स्वतः धन के लिए नहीं चाहा जाता। यह सब आत्मा ही के लिए प्रिय होते हैं। आत्मा अपने शुद्ध रूप में आनन्दमय है। यह इस बात से सिद्ध होता है कि जब मनुष्य सुषुप्तावस्था में रहता है तब शरीर इन्द्रिय विषय तथा मन से अपना सम्बन्ध भूल जाता है और अपने प्रकृत रूप में आकर सुख–दुःख से परे शान्त अवस्था को प्राप्त हो जाता है। दैनिक जीवन में जो थोड़ी सी सुखानुभूति होती है, वह अत्यल्प और दुःख से मिश्रित होने पर भी हमारे जीवित रहने की इच्छा को बनाये रखता है। आत्मा से दूर जाकर सांसारिक विषयों के पीछे दौड़ते रहने से अधिक आनन्द नहीं मिल सकता। विषयों को भोग करने की वासनाएं हमें जकड़कर सांसारिक बंधन में रखती हैं। वासनाओं के वेग हमें

आत्मा से दूर ले जाते हैं। जितना ही हम विषय वासना का परित्याग करते हैं। आत्मा या ब्रह्म के साथ अपनी एकता देखते हैं उतना ही अधिक हम परमानन्द प्राप्त करते हैं। आत्मा का दर्शन करना अनन्त, अमृत, आनन्दमय ब्रह्म में मिल जाना है। यही ब्रह्मानन्द है। इसे प्राप्त कर लेने पर कुछ भी अप्राप्त नहीं रहता। किसी वस्तु की कामना शेष नहीं रहती। जब मनुष्य का हृदय वासना रहित या निष्काम हो जाता है तब वह इसी जीवन में अमरत्व को प्राप्त कर लेता है। अद्वैत चिंतन आत्मा, जीव जगत और ब्रह्म की एकता को दिखलाता है।